के खिलाफ न जीत सकी। लाख उपाय किए गांधी ने, लेकिन जिन्ना को न जीत सके। क्या मामला है? क्योंकि जिन्ना को समझ में है साफ कि ये सब राजनैतिक दांव-पेंच हैं। इसलिए जिन्ना पर इसका कोई परिणाम न पड़ा। न मुसलमानों पर कोई परिणाम पड़ा। पाकिस्तान बंट कर रहा।

न परिणाम पड़ने का कारण है, क्योंकि जिन्ना भलीभांति जानता है कि राजनैतिक दांव-पेंच है यह। इसमें अहिंसा कुछ भी नहीं है। इसमें कोई बड़ा प्रेम नहीं है, यह सिर्फ होशियारी है।

पर गांधी आदमी ईमानदार हैं। उन्होंने जो भी किया, सदा--इससे हित होगा--इस आकांक्षा से किया। पर वह कृत्य से गहरा नहीं है। उनके अस्तित्व में नहीं है अहिंसा। इसको अगर तुम उनका जीवन गौर से देखो तो तुम्हें समझ में आ जाएगा कि उनके अस्तित्व में अहिंसा नहीं है। छोटी-छोटी बात पर वे हिंसक हो उठते थे।

कस्तूरबा ने दूसरों का पाखाना साफ करने से मना कर दिया। तो गांधी इतने नाराज हो गए कि गर्भवती कस्तूरबा को आधी रात घर के बाहर निकाल दिया। दरवाजा बंद करके धक्का देकर बाहर कर दिया। आठ महीने का गर्भ! पाखाना साफ करना पड़ेगा। पाखाना साफ करना या न करना, किसी और के द्वारा थोपी जाने वाली बात नहीं होनी चाहिए। यह कस्तूरबा का अपना निर्णय होना चाहिए। अगर उसे ठीक नहीं लगता तो गांधी कौन हैं? लेकिन पति, स्वामी! ये सब हिंसा की धारणाएं हैं। और इस पत्नी को बाहर निकाल देना गर्भ की ऐसी अवस्था में जब कि खतरा हो सकता है।

गांधी के बच्चे...गांधी ने चालीस साल की उम्र में ब्रह्मचर्य का नियम ले लिया। तब तक उनके तो कई बच्चे पैदा हो चुके थे। चालीस साल का मतलब आधी उम्र तो जा ही चुकी। चालीस साल की उम्र में ब्रह्मचर्य का व्रत लेना कोई बहुत महत्वपूर्ण बात नहीं है। चालीस साल की उम्र तक अगर किसी ने कामवासना का भोग किया है तो सहज ही ब्रह्मचर्य का निर्णय ले लेगा। कोई मूढ़ ही होगा जो उसके बाद भी ब्रह्मचर्य का निर्णय न ले। यह तो सहज स्वाभाविक होना चाहिए। इस उम्र के अनुभव के बाद उन्होंने निर्णय ले लिया। लेकिन लड़के उनके थे, हरिदास था, वह अठारह साल का है; वे उसको भी कहते हैं कि तू ब्रह्मचर्य का निर्णय ले। कसम खा ब्रह्मचर्य की।

यह हिंसा है। तुम चालीस साल में निर्णय लिए, पांच-सात बच्चों के बाप होने के बाद। तुम इस लड़के को अठारह साल की उम्र में कहते हो कि तू ब्रह्मचर्य का निर्णय ले। यह निर्णय भी कैसे ले? इसे अभी कामवासना का भी पता नहीं है।

यह आग्रह इतना जबरदस्त हो गया--कि तू ब्रह्मचर्य का निर्णय ले--कि हरिदास भाग गया। उसने भाग कर शादी कर ली। जब उसने शादी कर ली तो गांधी ने उसका निष्कासन कर दिया कि अब उससे मेरा कोई संबंध नहीं।

आखिर शादी ऐसा क्या पाप है? गांधी ने खुद की। सारी दुनिया करेगी। लेकिन यह जिद क्या है और जबरदस्ती क्या है? अगर इस व्यक्ति को ब्रह्मचर्य की तरफ नहीं जाना तो तुम कौन हो? सिर्फ बाप होने के कारण! यह हिंसा है। और इस हिंसा ने हरिदास को बरबाद कर दिया। जब गांधी ने इनकार कर दिया, वह असहाय हो गया। न उसके पास पैसा, न भोजन, न रहने का मकान--और शादी कर ली। तो वह उधार लेने लगा यहां-वहां से। वह जुआ खेलने लगा। वह उधारी पर ही जीने लगा। जब उसने काफी उधारी कर ली और अदालत में मुकदमा पहुंचा, तो गांधी ने अखबारों में वक्तव्य दे दिया कि मैं अब उसका पिता नहीं हूं, न वह मेरा बेटा है।

फिर वह शराब पीने लगा। जब उधारी न चुकी तो अब और क्या करे! चोरी करने लगा, शराब पीने लगा। वह बरबाद होता चला गया। वह हालत यहां पहुंच गई कि वह अपना चेहरा दिखाने योग्य किसी को न रहा। क्रोध में वह मुसलमान हो गया। उसने अपना नाम हरिदास से अब्दुल्ला कर लिया।

मरते वक्त, जब गांधी मरे, गांधी की जब मृत्यु हुई, तब हरिदास सम्मिलित हुआ था उस जुलूस में दिल्ली में। लेकिन ऐसा समझा जाता है कि अनुयायियों ने उसे पास नहीं पहुंचने दिया। और ऐसा समझा जाता है--हकदार वही था बड़े बेटे की तरह कि गांधी की चिता में आग देता, लेकिन उसको चिता में आग नहीं दी जाने दी गई।

अब यह हद की बात हो गई। बेहूदी हो गई। चाहे वह शराब पीता हो, चाहे मुसलमान हो, इससे क्या फर्क पड़ता है! बड़ा बेटा वही था। लेकिन गांधी का जीवन भर का विरोध इतना था कि अनुयायियों को भी पता था कि इसको पास नहीं आने देना। लाश के पास भी देखने नहीं आने दिया गया। वह भीड़ में दूर हजारों आदमियों में छिपा हुआ गया। दूर से खड़े होकर उसने बाप को जलते देखा। वह अग्नि नहीं दे सका।
ये सब हिंसाएं हैं। अहिंसक व्यक्ति के ये लक्षण नहीं। और अगर तुम गांधी के पूरे जीवन को गौर से देखोगे तो तुम बहुत चकित हो जाओगे कि छोटे-छोटे मामलों में बहुत हिंसा है, बड़े-बड़े मामलों में बड़ी अहिंसा है।

यह बड़ी सोचने की बात है। बड़े मामले में अहिंसक होना बहुत आसान है। छोटे मामले में अहिंसक होना मुश्किल है। क्योंकि छोटा मामला इतना छोटा होता है कि इसके पहले कि तुम सजग होओ, वह हो गया होता है। बड़े मामले में तो सोच-विचार की सुविधा होती है। ब्रिटिश गवर्नमेंट से लड़ना है, अहिंसा से लड़ सकते हो, योजना बना सकते हो।

लेकिन किसी ने तुम्हारे पैर पर पैर रख दिया, वह एक क्षण में हो गई बात। उस वक्त क्रोध आ गया तो आ गया। उसके लिए कोई योजना नहीं बनाई जा सकती। असल में, छोटी बातों से ही पता चलता है कि आदमी अहिंसक है या हिंसक। बड़ी बातों का कोई हिसाब नहीं है। बड़ी बातें व्यर्थ हैं। छोटी बातें ही सार्थक हैं।

गांधी के जीवन को छोटे-छोटे हिसाब से अगर जांचने चलोगे तो बड़े चकित हो जाओगे। बहुत हैरान होओगे। लेकिन वे आदमी ईमानदार थे, इसमें मुझे रत्ती भर संदेह नहीं है। वे तुम्हारे और तथाकथित साधुओं से ज्यादा ईमानदार थे। लेकिन उनकी ईमानदारी भ्रांत दिशा में थी। वे अहिंसक न हो पाए, न हो सकते थे। क्योंकि सारी चेष्टा अहिंसा को एक हथियार की तरह उपयोग करने के लिए थी। उन्होंने अहिंसा का हथियार बनाया। लड़ना तो था। लड़ने में हिंसा छिपी थी। लेकिन लड़ने का और कोई उपाय न था, तो उन्होंने अहिंसा का हथियार बनाया। अहिंसा भी हिंसा में नियोजित हो गई।

महावीर की बात बिलकुल भिन्न है। महावीर की कोई नीति नहीं है, कोई राजनीति नहीं है। महावीर की अहिंसा समाधि से उत्पन्न है। उन्होंने स्वयं को जाना। स्वयं को जान कर पाया कि सबके भीतर वही है, एक ही है। इसलिए अब दूसरे को चोट पहुंचानी अपने को ही चोट पहुंचानी है। कोई पराया न रहा, तो प्रेम का सहज आविर्भाव हुआ। कोई दूसरा न रहा, तो दुख पहुंचाने की बात गिर गई। महावीर की अहिंसा धार्मिक; गांधी की अहिंसा कभी-कभी नैतिक, अधिकतर राजनैतिक है।
सबै सयाने एक मत-ओशो

पहली कोशिश में मिली कामयाबी, ये हैं देश की पहली नेत्रहीन महिला आईएएस

छह साल की थी जब एक हादसे में आंखों की रौशनी चली गई. जिस बच्चे ने मां का चेहरा, घर, बाग-बगीचे देखे हों, जो सब्जी को उसकी खुशबू के अलावा उसकी रंगत से भी जानता हो, उसके लिए एकाएक सब एक रंग का हो गया- अंधेरा रंग. नॉर्मल स्कूल छूटा. दोस्त छूटे. भाषा छूटी. नेत्रहीन बच्चों का ये स्कूल मराठी मीडियम था. मैं घबराई तो लेकिन फिर नए सिरे से सीखे हुए भूलना और तब नया सीखना शुरू किया.

कॉलेज के लिए पब्लिक ट्रांसपोर्ट लेती तो आंखों के बगैर जानती थी, कितनी आंखें मुझे देख रही होंगी. कोई मदद करता तो कोई सवाल. देख नहीं सकती तो इतनी दूर कॉलेज जाने की क्या जरूरत! नेत्रहीन होना कभी भी मेरे लिए समझौते की वजह नहीं बन सका. बगैर आंखों के मैंने ख्वाब देखे और उन्हें पूरा किया.

प्रांजल पाटिल ने इन्हीं इरादों के साथ मुंबई से केरल का सफर तय किया और एक नेत्रहीन लड़की से देश की पहली महिला आईएएस अफसर तक का. 30 साल की प्रांजल ने हफ्ताभर पहले केरल के एर्नाकुलम में बतौर असिस्टेंट कलेक्टर जॉइन किया है. तब से लगातार अलग-अलग विभागों के अफसरों से मुलाकात कर रही प्रांजल के सामने अब चुनौती है, काम में खरा उतरने की. लेकिन ये कोई पहली बार नहीं.

छह साल की थी जब एक हादसे में आंखों की रौशनी चली गई. जिस बच्चे ने मां का चेहरा, घर, बाग-बगीचे देखे हों, जो सब्जी को उसकी खुशबू के अलावा उसकी रंगत से भी जानता हो, उसके लिए एकाएक सब एक रंग का हो गया- अंधेरा रंग. नॉर्मल स्कूल छूटा. दोस्त छूटे. भाषा छूटी. नेत्रहीन बच्चों का ये स्कूल मराठी मीडियम था. मैं घबराई तो लेकिन फिर नए सिरे से सीखे हुए भूलना और तब नया सीखना शुरू किया.

12वीं में आर्ट में टॉप करने के बाद प्रांजल ने घर से दूर एक नामी कॉलेज में एडमिशन लिया. रोज आया-जाया करती. ये पढ़ाई से भी मुश्किल काम था, प्रांजल याद करती हैं. मुंबई में सुबह लोगों का रेला निकलता और शाम को लौटता है. कई बार दिक्कत होने पर अनजान हाथों ने मदद की. कभी-कभी कोई पूछ लेता कि इतनी दूर जाकर पढ़ने की क्या जरूरत! समझाइश के पीछे ये भाव रहता कि जो भी हो आखिर हो तो नेत्रहीन. मैंने इतने सालों में संवेदना के नाम पर इतने सवाल झेले कि फिर फर्क पड़ना बंद हो गया.

पढ़ाई के सिलसिले में दिल्ली आई और तभी से आईएएस बनने का सपना पलने लगा. 2015 में मैं एमफिल कर रही थी और साथ में यूपीएससी की तैयारी कर रही थी. इतने बड़े इम्तिहान के लिए लोग ब्रेक लेकर तैयारी करते हैं. मेरे पास वो गुंजाइश नहीं थी. मैंने कोचिंग भी नहीं ली. कोचिंग जाना एक अतिरिक्त दबाव बनाता. जाने-आने के बचे वक्त में मैं तैयारी करती. मॉक टेस्ट देती. खुद को जांचती. मेरे पास क्योंकि कोई प्रतिस्पर्धा नहीं थी इसलिए तैयारी और मुश्किल थी. हालांकि इससे इरादे में कोई फर्क नहीं आया.

पढ़ाई और तैयारी साथ कर रही थी. एक सॉफ्टवेयर लिया. ये एक ऐसा स्क्रीन रीडर प्रोग्राम है जो नेत्रहीनों को पढ़ने में मदद के लिए बनाया गया है. प्रांजल यूनिवर्सिटी से किताबें लेती., उन्हें स्कैन करतीं और फिर कंप्यूटर उन्हें पढ़कर सुनाता. लंबी प्रक्रिया थी. कई बार ऊब जाती. कभी झुंझला जाती. लेकिन फिर जुट जाती. दुनिया देखने का अब यही एकमात्र जरिया रह गया था, वे याद करती हैं.

एक और चुनौती थी परीक्षा में राइटर चुनने की. जो लिख नहीं सकते, उन्हें 3 घंटे के एग्जाम में 1 अतिरिक्त घंटा मिलता है. लेकिन इतने समय में भी पूरे जवाब लिखना आसान नहीं था. ऐसे साथी की तलाश शुरू की जो मेरे कहे को उतनी ही तेजी से लिख सके. जल्द ही ये कोशिश भी कामयाब रही. हालांकि इसे बाद एक नाकामयाबी मेरा इंतजार कर रही थी. 2016 में पहली ही कोशिश में यूपीएससी में 773 रैंक आए. मैं इंडियन रेलवे अकाउंट सर्विस के लिए चुनी गई थी लेकिन पूरी तरह से नेत्रहीन होने की वजह से मुझे रिजेक्ट कर दिया गया. मैंने दोबारा कोशिश की. अगले ही साल यानी 2017 में मेरी रैंक 124 रही.

मसूरी में लंबी ट्रेनिंग के बाद प्रांजल को बतौर असिस्टेंट कलेक्टर केरल के एर्नाकुलम में पोस्टिंग मिली. सप्ताहभर पहले जॉइन कर चुकी प्रांजल फिलहाल नए काम को समझने में व्यस्त हैं. कहती हैं, सीखे हुए को भूलकर दोबारा सीखने में जितनी मेहनत लगी, कोई भी काम उससे मुश्किल नहीं.